भारतीय ज्ञान परंपरा की महत्ता एवं पुनर्स्थापना

सुशांत यादव*

भारतीय ज्ञान परंपरा अपने उद्‌गम से ही 'विज्ञानवान् प्रज्ञानवान् भवतु' के साथ ज्ञानार्थ प्रवेश, सेवार्थ प्रस्थान के शांतिपूर्ण सह-अस्तित्व और समावेशी समाज की परस्पर सहयोगी और बंधुत्वपूर्ण अवधारणा पर कार्य करती आई है। लेकिन ज्ञान की पश्चिमी अवधारणा और आधुनिकता ने इसे पूरी तरह प्रतिस्पर्धी बनाकर मानवीय समाज को बंधुत्व से परे प्रतिस्पर्धी में बदल दिया है। यह आने वाले समय में सामाजिक विद्वेष का कारण बनती जा रही है। यही कारण है कि वैश्विक स्तर पर पिछले कई दशकों से अध्यापन चिंता का विषय बना हुआ है। यूनेस्को की वर्ष 2021 में प्रकाशित रिपोर्ट (स्टेट ऑफ द एजूकेशन रिपोर्ट फॉर इंडिया 2021— नो टीचर, नो क्लास) ने भारत में लगभग एक करोड़ अध्यापकों की पेशेवर भूमिका और पहचान को स्कूली शिक्षा के विस्तार ने विविधतापूर्ण और चुनौतीपूर्ण बताया है। ऐसे में भारतीय अध्यापकों से भारतीय ज्ञान परंपरा से संपन्न 'पारंपरिक गुरु' और इक्कीसवीं सदी के 'आधुनिक शिक्षणशास्त्र के ज्ञान' से संपन्न और समृद्ध होने की उम्मीद की जाती है। इसी वजह से वर्तमान सदी न केवल विद्यार्थियों के लिए बल्कि अध्यापकों के लिए भी उतनी ही चुनौतीपूर्ण है। इस दृष्टि से राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 एक ऐसा अवसर प्रदान करती है जहाँ अध्यापक और विद्यार्थी दोनों ही ज्ञान की नूतन विषय-वस्तुओं एवं संदर्भों और देशज ज्ञान परंपरा के साथ अंतर्क्रिया कर सकेंगे। ऑनलाइन शिक्षा की आभासी दुनिया, यांत्रिक अधिगम और मानव जनित कृत्रिम बुद्धिमत्ता की अवधारणा दोनों के लिए ही नवीन है। इसलिए शिक्षा नीति इस बात पर बल देती है कि अध्यापक को आवश्यक एवं समयानुकूल बेहतर शिक्षा एवं प्रशिक्षण प्रदान कर तैयार किया जाए है। वस्तुतः इस तरह की वैचारिक समझ ही विलक्षण एवं चिंतनशील आधुनिक युवा पीढ़ी को अध्यापन-शैक्षिक क्षेत्र में कार्य करने के लिए प्रेरित कर सकेगी। यह लेख उपर्युक्त इन्हीं बिंदुओं को व्याख्यायित और विश्लेषित कर मार्गदर्शन प्रदान करता है।

भारत अति-प्राचीन सांस्कृतिक राष्ट्र है, जिसकी अपनी स्वस्थ, समय, समाज और परिस्थितिनुकूल देशज ज्ञान और चिंतन परंपरा रही है। इसकी पुष्टि इसके सैंधव सभ्यता के तहत प्राचीन सभ्यतागत होने, धार्मिक और पौराणिक साहित्यों, ऐतिहासिक साहित्यों जिसमें भारतीय और विदेशी दोनों साहित्य सम्मिलित हैं और सबसे महत्वपूर्ण पुरातात्विक साक्ष्य के तौर पर प्रस्तर शिलालेख, मंदिर, मठ, लौह पट्टिकाएँ, गुफा अभिलेख आदि से होती है। लेकिन इन तथ्यों के मध्य यह भी ऐतिहासिक सच्चाई है कि भारत में लगभग चौथी शताब्दी से ही बाह्य आक्रमण की शुरुआत हो चुकी थी। हूण, शक, कुषाण, पल्लव, तुर्क, मुगल और अंत में ब्रिटिश हुकूमत का शासन इस बात का साक्षी है

*असिस्टेंट प्रोफेसर, राजनीति विज्ञान विभाग, कृषक स्नातकोत्तर महाविद्यालय, मवाना, मेरठ 250401

कि इस प्राचीन राष्ट्र भारत ने कई बाह्य आक्रमणों को झेलते हुए अपने अस्तित्व को बचाए रखा। इन बाह्य आक्रमणकारियों ने भारत में शासन संचालन के दौरान अपनी देशज ज्ञान परंपरा और संस्कृति को सदैव विस्तारित करने की कोशिश की। जिसकी परिणति के तौर पर यह देखते हैं कि आक्रमण के पश्चात बाहर से आई सांस्कृतिक परंपराओं ने अपनी देशज सांस्कृतिक सर्वोच्चता को स्थापित करने के लिए उस विशेष बाह्य शैली के ज्ञान एवं कला को अत्यधिक बढ़ावा दिया और भारतीय ज्ञान और संस्कृति को नेपथ्य में ढकलने का कार्य किया। भारतीय सांस्कृतिक उत्थान की अवधारणा इसी नेपथ्य को मुख्यधारा में शामिल करने की संकल्पना है, जो कि भारतीय ज्ञान परंपरा की महत्ता पर प्रकाश डालता है। यह बाज़ारवाद, उपभोक्तावाद, अत्यधिक औद्योगिकीकरण से उपजे पर्यावरणीय क्षरण आदि समस्याओं से ग्रस्त वैश्विक मानवीय समाज को प्रकृति के साथ सहभागी और सतत विकास के लिए प्रेरित करता है। प्रस्तुत लेख सर्वप्रथम भारतीय ज्ञान परंपरा की सामाजिक जीवन में वैश्विक महत्ता को व्याख्यायित करता है। इसके पश्चात इसके पुनर्स्थापना हेतु सरकार द्वारा किए जा रहे प्रयासों का वर्णन करता है और साथ-ही-साथ *राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020* द्वारा भारतीय ज्ञान परंपरा को पुनर्स्थापित करने के लिए जो आवश्यक उपाय किए गए हैं उसकी भी व्याख्या करता है।

भारतीय ज्ञान परंपरा— एक अवलोकन

विश्व ने प्राचीनकाल में भारत को उसकी ज्ञान की खोज और प्राप्ति, आध्यात्मिकता पर ध्यान केंद्रित करने, प्रकृति का सम्मान करने की आवश्यकता की समझ और मानव-प्रकृति पारस्परिकता को बनाए रखने की दायित्व लेने के कारण सम्मान दिया और सदैव आभार जताया। पुरातन समय से ही संसार के अन्य स्थानों पर स्थित दूसरे लोगों की परवाह करने के लिए भारत का सम्मान किया जाता था। इसका दर्शन ऋग्वेद में वर्णित ऋचा संख्या— 1.164.46 के सूक्त *'एकं सद् विप्रा बहुधा वदन्ति'* में किया जा सकता है। जिसका अर्थ है कि सत्य एक है, और ज्ञानियों ने इसे अलग तरह से व्याख्यायित किया है। इस विचार को आगे बढ़ाते हुए भगवद्गीता के अध्याय 12 में श्लोक 3–4, *'सर्व भूत हिते रतः'* के द्वारा एक शांतिपूर्ण दुनिया का मार्ग प्रशस्त करने का विचार सन्निहित है। इसमें 'दुनिया एक परिवार है' को ध्येय वाक्य मानकर चला जाता है। वर्तमान वर्ष अर्थात 2023 में भारत सरकार द्वारा भारत की जी-20 की अध्यक्षता में *'एक पृथ्वी, एक परिवार, एक भविष्य'* के नारे के साथ 'वसुधैव कुटुम्बकम्' के अपने पुरातन ध्येय वाक्य को पुनः संस्थापित कर भारत की गौरवशाली समरसता को विश्व के साथ साझा किया जा रहा है।

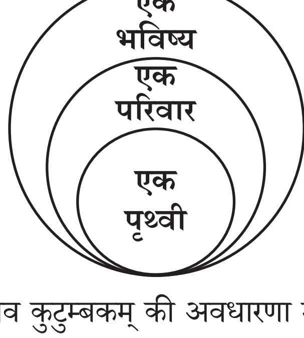

वसुधैव कुटुम्बकम् की अवधारणा मानव ऋण को व्यावहारिकता प्रदान करता है, *'अयं निजः परो वेति गणना लघुचेतसाम्, उदारचरितानां तु वसुधैव कुटुम्बकम्।'* यह *महोपनिषद* के चतुर्थ अध्याय के

71वें श्लोक के रूप में वर्णित है, जो सनातन धर्म का मूल मंत्र है। यह ध्येय वाक्य एक बार जब व्यावहारिक रूप से प्रासंगिक और सभी के द्वारा आंतरिक रूप में अपना लिया जाता है तो स्पष्ट रूप से 'अपरिग्रह' अर्थात 'गैर-संचय' का अभ्यास करने के लिए प्रेरित करता है। यहाँ उल्लेखनीय है कि योग सूत्र "*अहिंसासत्यास्तेयब्रह्मचर्यापरिग्रहा यमा: ।।30।।*", में 'अपरिग्रह' को अहिंसा, सत्य, अस्तेय और ब्रह्मचर्य के पश्चात पाँचवें यम के रूप में व्याख्यायित किया गया है।

समकालीन संदर्भ में, मानव उन्नति और सतत विकास का एक सर्व-समावेशी दर्शन प्राचीन भारतीय ज्ञान परंपरा के तीन ऋणों में निहित है जो प्रत्येक मनुष्य को उसके जन्म के समय विरासत में मिलता है और प्राचीन शा श्वत ज्ञान प्रत्येक व्यक्ति को कर्तव्यपरायणता से इन दायित्वों का निर्वहन करने का आदेश देता है— '*ये देव ऋण, पितृ ऋण और ऋषि ऋण हैं।*' मोटे तौर पर इन्हें देवताओं के ऋण, माता-पिता के ऋण और ऋषियों/गुरुओं/विद्वानों के ऋण के रूप में देखा जा सकता है। वैदिक अवधारणा में, प्रत्येक मनुष्य जन्म से इन ऋण को वहन करता है। *तैत्तिरीय संहिता* इन तीन प्रकार के ऋणों के बारे में बताती है। हिंदू धर्मशास्त्र शतपथ ब्राह्मण के अनुसार, ये तीन ऋण एक अच्छे सामाजिक वातावरण और मानवीय समाज का निर्माण करते हैं। ये ऋण लोगों को समाज, मानव जाति और प्रकृति के प्रति उनके दायित्वों के बारे में कर्तव्यबोध कराते हैं। इन ग्रंथों का मानना है कि जब इन तीनों ऋणों को ध्यान में रखकर सामाजिक और मानवीय क्रिया क्रियान्वित की जाएगी तो सर्वांगीण उन्नति और समृद्धि होगी। महाभारत में, चौथा तत्व मानव ऋण; मानवता के एका भाव बहुत स्पष्ट है—

कोई भी प्राचीन भारतीय ज्ञान परंपरा से ज्ञान के ऐसे असंख्य संस्मरणों का उद्धरण दे सकता है। जो मनुष्य को विस्मय में डालते हैं कि इन्हें प्राचीनकाल में कैसे समझा जा सकता था। यह विस्मय वैश्विक परिदृश्य पर भारत और इसकी विरासत की गलत और जानबूझकर बनाई गई प्रस्तुति से आता है। पिछले 75 वर्षों में, भारत और इसकी सामाजिक, सांस्कृतिक और शिक्षा प्रणालियों के बारे में धारणाएँ बदली हैं और ज्यादातर सकारात्मक दिशा में बदली हैं। भारत में अनादि काल से विद्यार्थियों के समग्र विकास पर बल दिया जाता रहा है जिससे पूर्ण आत्म-साक्षात्कार और तर्क के क्षेत्र में उदारीकरण हो सके। स्वामी विवेकानंद के अनुसार, "शिक्षा वह जानकारी नहीं है जो आपके मस्तिष्क में डाल दी जाती है और वहाँ हंगामा करती है, और जिसे आप पूरे जीवन में ग्राह्य नहीं कर पाते है। हमारे पास विचारों का जीवन-निर्माण, मानव-निर्माण, चरित्र-निर्माण आत्मसात होना चाहिए।" भारत के

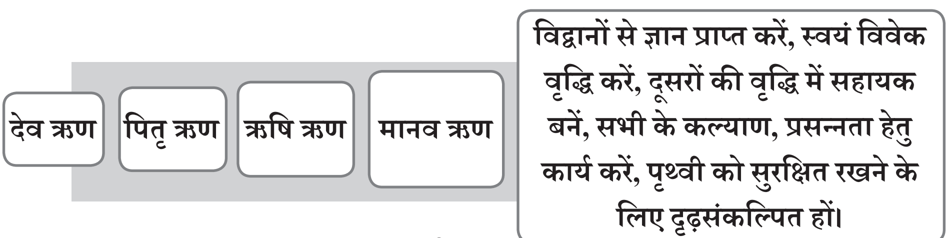

चित्र 1

पास बौद्धिक ज्ञान, संस्कृति, कई भाषाओं, विविध नृत्यों और लोक कला, संगीत, मिट्टी के बर्तन, कपड़ा, जैव विविधता, पर्यावरण-परिवर्तनशीलता और बहुत कुछ में प्रकट महान विविधता की विरासत है। भारतीय समाज त्यौहारों और मेलों का समाज है। हमारे समाज की पारंपरिक प्रथाएँ वैज्ञानिक भी हैं और मनोवैज्ञानिक भी। स्वदेशी ज्ञान प्रणाली को वैज्ञानिक और प्रयोगशालाओं द्वारा संपुष्ट किया जाना चाहिए, व्यावसायिक स्कूल द्वारा विपणन किया जाना चाहिए और विश्व स्तर के नियमों द्वारा पुष्ट किया जाना चाहिए।

यदि हम प्रकृति के अनुकूल स्वास्थ्य देखभाल की बात करें तो भारत के पास आयुर्वेद जैसा चिकित्सा विज्ञान, भारतीय संगीत की कालातीत लय, सबसे आधुनिक मंदिर वास्तुकला, भारतीय व्यंजनों की सुगंध जो हमारे भारतीय समाज की कोमल या मृदु शक्ति हैं, के तौर पर इनका उपयोग होना चाहिए। भारत दुनिया का सबसे अच्छा कृषि उत्पादक है। भारत अपने गेहूँ और चावल का निर्यात कर रहा है। भारत की चीनी की विश्व में बहुत माँग है तथा हमारा जैविक गुड़ बेहतरीन गुणवत्ता वाली निर्यात वस्तु है। भारतीय समाज की इन कृषि शक्ति को भारतीय पाठ्यपुस्तक और कक्षा के विचार-विमर्शों में सम्मिलित किया जाना चाहिए। यदि पूर्व-कटाई और कटाई के बाद की तकनीकों एवं खुदरा सिस्टम द्वारा विपणन की जाने वाली वैज्ञानिक और जैविक पैकेजिंग सामग्री पर शोध द्वारा ठोस कार्य किया जाए तो ऑनलाइन प्रणाली के बलबूते यह अतिरिक्त मूल्य बनकर उभरेगी और अधिक लाभ प्राप्त करेगी। व्यापारिक निर्यात के तहत, 30 प्रमुख क्षेत्रों में से 13 ने पिछले वर्ष की समान अवधि (मई 2022) की तुलना में इस वर्ष मई 2023 में सकारात्मक वृद्धि प्रदर्शित की। मई 2023 में भारत का कुल निर्यात 60.29 बिलियन अमेरिकी डॉलर रहा।

आरेख 1— मई 2022 से मई 2023 में निर्यातित वस्तुओं में वृद्धि (प्रतिशत)

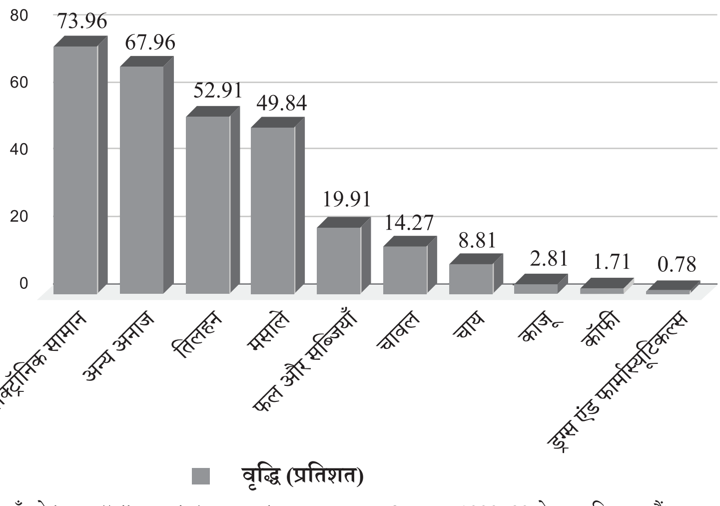

स्रोत— आँकड़े https://pib.gov.in/PressReleasePage.aspx?PRID=1932782 से प्राप्त किए गए हैं।

अगर अपने आस-पड़ोस के योग, आयुर्वेद, संगीत, अपनी जड़ी-बूटियों, अपने मसालों पर पुनर्विचार करें तो हमारी अर्थव्यवस्था को आने वाले वर्षों में खूब बढ़ावा मिलेगा। इसलिए, विद्यार्थियों को जीवन कौशल, सामाजिक कौशल, व्यक्तिगत स्वच्छता, संचार कौशल, समूहों के साथ काम करने, साझेदारी की शक्ति, साझा करने और देखभाल करने की शक्ति, परामर्श के कौशल, रोगी सुनने के कौशल और रचनात्मक जुड़ाव को सिखाने की आवश्यकता है, जो उन्हें सामूहिकता की कार्य संस्कृति ओर ले जाएगा। यद्यपि ये कौशल भारत के लिए नए नहीं हैं वरन ये सामाजिक मूल्यों का हिस्सा थे। देखभाल करना और ज्ञान साझा करना भारतीय समाज की सामान्य प्रथा है।

भारतीय ज्ञान परंपरा की पुनर्स्थापना—ऐतिहासिक अवलोकन

इसकी शुरुआत वर्तमान समय में नहीं हुई, बल्कि औपनिवेशिक काल में ही ब्रिटिश भाषाविद विलियम जोंस ने इस क्षेत्र में पहल की। सन् 1783 में विलियम जोंस ईस्ट इंडिया कंपनी द्वारा स्थापित सुप्रीम कोर्ट में जूनियर जज के रूप में कलकत्ता आए थे। जोंस एक भाषविद् थे भारत आते ही उनकी रुचि संस्कृति, फ़ारसी भाषाओं में बढ़नी प्रारंभ गई। जिसके लिए वह संस्कृत के विद्वानों से प्रतिदिन घंटों संस्कृत की बारीकियाँ, व्याकरण, संस्कृत काव्यों का अध्ययन करने लगे। कुछ ही समय में उन्होंने कानून, दर्शन, धर्म, राजनीति, नैतिकता, अंकगणित, चिकित्सा विज्ञान और अन्य विज्ञानों की प्राचीन भारतीय पुस्तकों का अध्ययन प्रारंभ कर दिया। जोंस भारत के प्रति एक विशेष प्रकार का दृष्टिकोण रखते थे। वह भारत और पश्चिम, दोनों की प्राचीन संस्कृतियों के प्रति गहरा आदर भाव रखते थे। उनका मानना था कि भारतीय सभ्यता प्राचीन काल में अपने वैभव के शिखर पर थी परंतु बाद में उसका पतन होता चला गया।

उनकी राय में, भारत को खोजना और समझना बहुत आवश्यक था। उनका मानना था कि हिंदुओं और मुसलमानों के असली विचारों व कानूनों को इन्हीं रचनाओं के माध्यम से समझा जा सकता है और इन रचनाओं के पुनः अध्ययन से ही भारत के भावी विकास का आधार पैदा हो सकता है। लेकिन वुड्स डिस्पैच नीति और लॉर्ड मैकॉले के यूरोपीय ज्ञान के प्रति सर्वोच्चता का दंभ और भारतीय या एशियाई ज्ञान के प्रति पूर्वाग्रह ने भारतीय ज्ञान परंपरा के उत्थान की गति को न केवल अवरुद्ध कर दिया, बल्कि पिछले बाह्य शासनकारियों की अपेक्षा, जिन्होंने देशज भारतीय ज्ञान परंपरा और संस्कृति को नेपथ्य में छोड़ दिया था, से दो कदम और आगे बढ़ते हुए भारतीय ज्ञान परंपरा को औपनिवेशिक शासन के बलबूते पिछड़ी, अवैज्ञानिक, अतार्किक, रूढ़िवादी आदि घोषित करने की भरपूर कोशिश की। प्राच्यवादी विचारकों के बढ़ते प्रभाव, ए.एल.बाशम, मैक्स मूलर आदि के साहित्य, सर कनिंघम और कर्नल जेम्स टॉड आदि के पुरातात्विक खोज और महात्मा बुद्ध, स्वामी विवेकानंद, महात्मा गांधी आदि के विचारों की वैश्विक स्तर पर स्वीकारोक्ति ने मैकॉले और उनसे प्रभावित विद्वानों के भारतीय ज्ञान परंपरा के बारे में व्याप्त पूर्वाग्रह को समाप्त करने का श्रमसाध्य कार्य किया। वहीं भारत में स्वामी विवेकानंद

के रामकृष्ण मिशन, दयानंद सरस्वती के आर्य समाज, बाल गंगाधर तिलक के देशज ज्ञान परंपरा और सांस्कृतिक उत्थान के प्रयासों ने भारतवर्ष में व्यापक स्तर पर ब्रिटिश उपनिवेश की सर्वोच्चता की अवधारणा को चुनौती प्रदान की।

भारतीय ज्ञान परंपरा की पुनर्स्थापना— परिवर्तनीय तथ्य

स्वतंत्रता पश्चात अब निर्वाचित सरकारों का ज़िम्मेदारी थी कि वे गौरवशाली भारतीय ज्ञान परंपरा को पुनर्स्थापित करने का कार्य करें। लेकिन इस सांस्कृतिक पुनरुत्थान की जगह शोषणकारी औपनिवेशक दौर से उपजी निर्धनता, अशिक्षा, भुखमरी, स्वास्थ्य संकटों से जूझ रहे निवासियों को इन मूलभूत आवश्यकताओं की पूर्ति करने पर तत्कालीन सरकारों ने अधिक बल दिया। इक्कीसवीं सदी के आगमन के पूर्व ही भारत में मानवीय आवश्यकताओं को पूर्ण करने में या कहीं-न-कहीं यूँ कहें कि एक बड़े स्तर पर सफल हुए हैं। इसके पश्चात अब हमारा ध्यान पुनः अपनी ज्ञान परंपरा की महत्ता और उसके उत्थान के बिंदुओं पर जाता है जिन्हें पूर्ण करना सरकार की अन्य सभी दायित्वों की तरह एक महत्वपूर्ण दायित्व है। वर्तमान सरकार ने इस क्रम में कुछ महत्वपूर्ण कार्य किए भी हैं। उदाहरण के तौर पर एक भारत श्रेष्ठ भारत, मेरी माटी मेरा देश, खेलो इंडिया, फिट मूवमेंट आदि के साथ-साथ *राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020* में सुगमता से समझ सकते हैं। इसके अतिरिक्त *बुनियादी स्तर की राष्ट्रीय पाठ्यचर्या की रूपरेखा 2022* तथा *शिक्षा की राष्ट्रीय पाठ्यचर्या की रूपरेखा 2023* में भारतीय ज्ञान परंपरा को पुनर्स्थापित करने का प्रयास किया गया है।

राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 बच्चों को तीन भाषाएँ सिखाने के महत्व को रेखांकित करती है और बच्चों में बहुभाषावाद को बढ़ावा देती है। इसके अतिरिक्त, यह किसी की मातृभाषा या देशी भाषा में सीखने के आधारभूत चरण को शुरू करने के मूल्य को महत्व देती है। यह मानती है कि नौकरी चाहने वालों के बीच, अंग्रेज़ी भाषा में प्रवाह को उच्च स्तर की शिक्षा का संकेत माना जाता है। यह भारतीय संस्कृति की समझ विकसित करने पर बल देता है, जिसमें स्थानीय या क्षेत्रीय भाषाएँ शामिल हैं। *राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020* बच्चों को 'कैसे सीखें' पढ़ाने के मूल्य पर बल देती है। इसके अतिरिक्त, यह बागवानी और क्ले मॉडलिंग जैसे कौशल सीखने के लिए अपने हाथों का उपयोग करने पर बल देती है। यह योग, काष्ठकला, बागवानी और बिजली के काम जैसे सभी व्यावसायिक कौशल संबंधी विषयों को लागू करने की अनुशंसा करने और पाठ्यचर्या और पाठ्येतर या सह-पाठयक्रम गतिविधियों के बीच सामग्री के कोई कठोर पृथक्करण को समाप्त करती है।

भारतीय ज्ञान परंपरा— *राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020* का अवलोकन

तीन दशक से अधिक समयावधि के पश्चात भारत ने देशज ज्ञान के द्वारा 'सामाजिक-सांस्कृतिक परिवर्तन से आत्मनिर्भर राष्ट्र' बनाने की वैचारिक कार्यनीति के तौर पर *राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020* को 29 जुलाई, 2020 में स्वीकार किया गया। यह शिक्षा नीति यद्यपि पूर्व में आईं शिक्षा नीतियों एवं शिक्षा आयोगों तथा समितियों को आधार बनाते हुए बनाई गई है। इस परिप्रेक्ष्य में *राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020* के अध्यक्ष प्रो. के.

कस्तूरीरंगन बताते हैं कि इक्कीसवीं सदी का भारतीय अधिगमकर्ता जहाँ एक ओर अपनी समृद्ध ज्ञान-विरासत, संस्कृति एवं मूल्यों से पुनर्संगठित होगा, वहीं आधुनिक-तकनीकी दुनिया के प्राणसूत्र 'विस्तृत आँकड़े, यांत्रिक अधिगम और कृत्रिम बुद्धिमत्ता' उसको वैश्विक नेतृत्वकर्ता के रूप में परिलक्षित करेगा।

देशज ज्ञान और वैश्विक तकनीकी के सहचर्य के संदर्भ में यह प्रगतिगामी समझ और रणनीति एक बड़ी समयावधि से बहु-प्रतीक्षित ज्ञानमीमांसीय प्रकार्यात्मक परियोजना का विस्तार है, जिसे *राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020* के माध्यम से अंगीकार किया गया है। इस शिक्षा नीति के द्वारा न केवल शैक्षिक तंत्र, संरचनाओं एवं प्रकार्यों को परिमार्जित करने का लक्ष्य रखा गया बल्कि संपूर्ण ज्ञान उद्देश्यों एवं संदर्भों को एक नवीन परिप्रेक्ष्य में प्रस्तुत किया गया है। संपूर्ण विश्व के प्रत्येक शैक्षिक विमर्श में 'जीवनपर्यंत सीखने' की बढ़ती हुई स्वीकार्यता के तहत सीखने की शुरुआत करने, सीखने और नई शिक्षा को पुनः सीखने पर बल दिया जा रहा है। इस विमर्श को प्राचीन भारतीय ग्रंथों में वर्णित किया जा सकता है। यह नीति अखिल भारतीय स्तर पर संपूर्ण शिक्षा व्यवस्था को इक्कीसवीं सदी के नवीन अर्थों एवं संदर्भों को दर्शाती है।

राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 की आवश्यकता और भारतीय ज्ञान परंपरा की महत्ता की बात करें तो यह शिक्षा नीति आद्योपरांत इस बात का व्यावहारिक स्पष्टीकरण है कि राष्ट्र के समग्र विकास की वैचारिक परियोजना की याग्निक प्रतिदीप्ति का मूल, शिक्षा के मार्ग से निर्मित जनचेतना से ही संभव है। भगवद्गीता के अध्याय-चार के श्लोक 38 में संकल्पित अवधारणा *'न हि ज्ञानेन सादृशं पवित्रमिह विद्यते'* से वैश्विक मानवता का ज्ञानमार्गी संधान करने की जिजीविषा ही भारतीय जनचेतना का साभ्यतिक मूल और ज्ञानमीमांसीय पक्ष है। यही कारण है कि राष्ट्रीय शिक्षा नीति ने अपनी प्रस्तावना में इस बात को रेखांकित किया है कि ज्ञान, प्रज्ञा और सत्य की खोज भारतीय विचार परंपरा और दर्शन में सदैव सर्वोच्च मानवीय लक्ष्य रहा है। इसी कारण प्राचीन एवं सनातन भारतीय ज्ञान और विचार की इसी समृद्ध परंपरा के आलोक में यह नीति तैयार की गई। शिक्षा की यह लोक नीति 27 अध्यायों में वर्णित है, जिसमें भारतीय शिक्षा के हर आयाम को व्याख्यायित और संदर्भित किया गया है। यह नीति शिक्षाविदों के अलावा ढाई लाख ग्राम पंचायतों, छह हजार छह सौ विकासखंडों, छह हजार ग्राम स्तरीय ईकाइयों, छह सौ छिहत्तर जनपदों से प्राप्त लगभग दो लाख से अधिक सुझावों और अभिमतों के आधार पर तैयार जनभावना को अंतर्भूत किए हुए है। इस नीति के पाँच महत्वपूर्ण आधार-स्तंभ हैं—

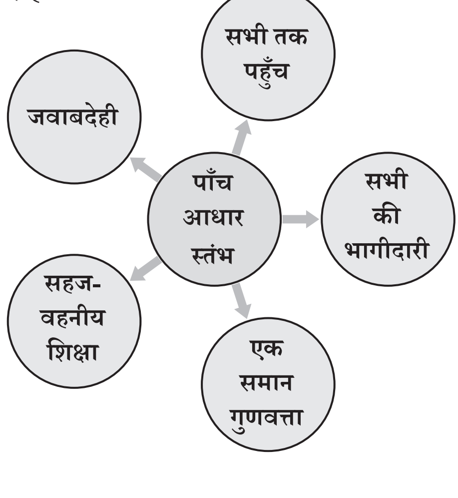

बौद्धिक रचनात्मकता के इस माहौल में शैक्षिक संस्थानों, शिक्षकों और शैक्षिक नेतृत्व को अपने परंपरागत क्षेत्र से बाहर आकर व्यावहारिक अधिगम प्रणाली को विकसित करने के लिए आधुनिक व्यावसायिक मानकों को आत्मसात करना होगा। वैज्ञानिक अनुसंधान और नवाचारों हेतु इस प्रकार के पारिस्थितिकी-तंत्र और कार्य-संस्कृति को विकसित और पोषित करना होगा जिससे संसाधनों के भागीदारीपूर्ण सृजन के साथ-साथ लोकतांत्रिक एवं समतामूलक वितरण भी सुनिश्चित हो सके। ऐसा करके ही इक्कीसवीं सदी का शिक्षक सामाजिक-सांस्कृतिक परिवर्तन का माध्यम बनते हुए व्यक्ति, समाज और मानवता को साभ्यतिक सार्थकता प्रदान कर सकेगा। शिक्षकों का यह नैतिक दायित्व है कि वे एक-दूसरे से सीखते हुए स्वयं को समृद्ध, नवाचारी और जीवंत बनाए रखें, ऐसा करके ही वे *राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020* के उद्देश्यों को पूरा कर सकेंगे।

विद्यालयी शिक्षा की अधिगम-शिक्षण प्रक्रिया में भारतीय ज्ञान परंपरा की उपयोगिता

वस्तुतः भारतीय जन-संस्कृति और साभ्यतिक वाङ्मय ज्ञान, न्याय और समता की साधना को अभीष्ट के रूप में आत्मसात करता है। इस संदर्भ में यह शिक्षा नीति इसी प्रेरणा को निष्ठा में बदलने का 'जन संकल्प-पत्र' है। इसके अंतर्गत अध्यापक की अस्मिता और गरिमा को स्वीकार करते हुए यह शिक्षा नीति भारतीय समाज में अध्यापकों के उच्च सम्मान तथा उनकी सामाजिक स्वीकार्यता को पुनर्स्थापित करने के उद्देश्य से कई व्यवस्थामूलक नवाचारी सुधार हेतु अग्रसर है। उपयोगिता के तौर पर यह लेख एक ओर विश्व में होने वाले तीव्रगामी परिवर्तनों और उभरती हुई आधुनिक-तकनीकी विश्व-व्यवस्था में कालक्रम से आक्षिप्त हुई भारतीय विद्यालयी शिक्षा की अधिगम-शिक्षण प्रक्रिया की जड़ता, विकृतियों और आत्म-मुग्धता का प्रक्षालन करती है। वहीं विद्यालयी शिक्षा की अधिगम-शिक्षण प्रक्रिया के केंद्र विद्यार्थियों और अध्यापकों में भारतीय सभ्यता के गौरवशाली अतीत के प्रति निष्क्रिय गौरवबोध को समकाल के वैश्विक संदर्भों में बढ़ती महत्ता के रूप में युक्तियुक्त तथ्य एवं तर्क के साथ विश्लेषित करके उनमें भारतीय ज्ञान परंपरा की आत्म-चेतना के विस्तार का प्रयास करती है। इससे उन्हें अपने प्राचीन वैदिककालीन ज्ञान एवं आधुनिक ज्ञान में सामंजस्य स्थापित कर नए दृष्टिकोण से देखने की प्रेरणा मिलेगी। और यह प्रेरणा न केवल विद्यालयी शिक्षा की अधिगम-शिक्षण प्रक्रिया के केंद्र विद्यार्थियों और अध्यापकों में बल्कि अन्य भारतीयों में भी अपनी भारतीय ज्ञान परंपरा को 'सार्वभौमिक मानवतावाद' के रूप में एक नई वैचारिकी प्रदान करती है।

निष्कर्ष

राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 के केंद्र में मनुष्य की वह भारतीय अवधारणा है जिसमें मानव को एक जैविक इकाई न मानकर समस्त चेतन-अवचेतन सृजनाओं के स्रोत की एक आत्मचेतन सत्ता माना है। यहाँ उल्लेखनीय है कि जहाँ डार्विन मनुष्यों की

उत्पत्ति सतत विकास के तौर पर बंदरों से बताते हैं, वहीं भारतीय ज्ञान परंपरा में इसके विपरीत मनुष्य को सर्वसमर्थ ब्रह्म के समान माना गया है। *यजुर्वेदः बृहदारण्यकोपनिषत्* के अध्याय 1 *ब्राह्मणम् 4* के मंत्र 10 में '*अहं ब्रह्मास्मि*' महावाक्य वर्णित है। जिसका सामान्य शाब्दिक अर्थ है कि मैं (आत्मा) ब्रह्म हूँ। मुझमें ही ब्रह्म रहता है। मैं आत्मस्वरूप, अजर, अमर, अविनाशी हूँ। ब्रह्मांड की संपूर्ण शक्ति मुझमें ही विद्यमान है और ज्ञान के समस्त अनुशासन उसी मनुष्य के आधिभौतिक, आधिदैविक और आध्यात्मिक आयामों को चतुर्दिक रूप से पुष्ट करते हैं। मनुष्य के इस ज्ञानात्मक अस्तित्व के साभ्यतिक-सांस्कृतिक विस्तार के लिए यह शिक्षा नीति एक ओर ऋग्वेद में वर्णित (*ऋग्वेद*.1.89.1) '*आनो भद्रा क्रतवो यंतु विश्वतः*' की भारतीय ज्ञान-संस्कृति का प्रति-स्मरण कराती है। वहीं दूसरी ओर भगवद्गीता के अध्याय चार में वर्णित श्लोक संख्या 34 जन्म कर्म सन्यास योग के तहत '*प्रतिप्रश्नेनसेवया*' की ज्ञानमीमांसीय अभियांत्रिकी के द्वारा ज्ञान और सत्य के प्रति उदारमना प्रवृति को प्रखर आलोचनात्मकता के विमर्श से संपोषित भी करती है। इस नीति के क्रियान्वयन में कठिनाइयों पर दृष्टि डालें तो भारतीय शिक्षा व्यवस्था की चुनौतियाँ ही इस शिक्षा नीति की व्यावहारिक चुनौतियाँ हैं। उदाहरण के रूप में वर्ष 2030 तक दो करोड़ शिशुओं को शिक्षा की मुख्यधारा में शामिल करना, अखिल भारतीय स्वरूप में माध्यमिक शिक्षा तक सार्वभौमिक पहुँच और विद्यालयों में सौ प्रतिशत नामांकन के साथ-साथ उच्चतर शिक्षा में वर्ष 2035 तक पचास प्रतिशत नामांकन को सुनिश्चित करना तथा शिक्षा पर व्यय को सकल घरेलू उत्पाद के 1.7 प्रतिशत से बढ़ाकर छह प्रतिशत तक करना इस शिक्षा नीति का लक्ष्य है, जो वस्तुतः भारतीय शिक्षा व्यवस्था की चुनौती भी है। इस चुनौती को वैज्ञानिक, सामाजिक एवं संस्थागत रूप से भारत सरकार द्वारा सार्थक दस्तावेज़ (जो *राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020* के क्रियान्वयन एवं जवाबदेही का दस्तावेज़ है।) के द्वारा योजनाबद्ध रूप से क्रियान्वित करने का सार्थक प्रयास किया जा रहा है।

संदर्भ

अय्यर, वैद्यनाथ. 2017. *हिस्ट्री ऑफ एजुकेशन पॉलिसी मेकिंग इन इंडिया.* ऑक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस, नई दिल्ली.

कपूर, कपिल और अवधेश कुमार सिंह. 2005. (सं.). *इंडियन नॉलेज सिस्टम्स— नेचर, फिलॉसफी एंड कैरेक्टर* (भाग—एक). इंडियन इंस्टिट्यूट ऑफ एडवांस स्टडीज, शिमला.

ठाकुर, रवींद्रनाथ. 1977. *रवींद्रनाथ का शिक्षा दर्शन*. ग्रंथ शिल्पी (इंडिया) प्राइवेट लिमिटेड, नई दिल्ली.

बाशम, ए. एल. 2013. *अद्भुत भारत*. शिवलाल अग्रवाल एंड कंपनी, आगरा.

मल्होत्रा, राजीव. 2013. *विभिन्नता*. हॉर्पर कोलिंस, नई दिल्ली.

मानव ससांधन विकास मंत्रालय. 2020. *राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020*. भारत सरकार, नई दिल्ली.

मैक्स, मूलर. 2013. *भारत हमें क्या सिखा सकता है*. राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली.

यूनेस्क. 2023. नो टीचर नो क्लास— स्टेट ऑफ एजुकेशन रिपोर्ट फॉर इंडिया. 18 जुलाई, 2023 को https://www.unesco.org/en/no-teacher-no-class-state-education-report-india-2021 से प्राप्त किया.

सदगोपाल, अनिल. 2009. *शिक्षा में बदलाव का सवाल*. ग्रंथ शिल्पी (इंडिया) प्राइवेट लिमिटेड, नई दिल्ली.

वेबसाइट्स

न हि ज्ञानेन सादृशं पवित्रमिह विद्यते।

तत्स्वयं योगसंसिद्धः कालेनात्मनि विन्दति।।4.38।।

गीता सुपरसाइट. 2023. श्रीमद्भगवद्गीता, अध्याय 4, श्लोक 38. गीता सुपरसाइट, आई.आई.टी. कानपुर, उत्तर प्रदेश.

20 जुलाई, 2023 को https://www.holy-bhagavad-gita.org/chapter/12/verse/3-4, से प्राप्त किया.